Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 09-11-2021, Accepted: 25-11-2021, Published: 10-12-2021
Volume 2, Issue 2, 2021, Page No. 43-44

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र और उनके तुलसीदास

रेणुका देवी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

सारांश
जब कोई कृतिकार अपने अंतर्मन में संचित किए गए विभिन्न, देखे व समझे गए अनुभवों तथा यथार्थ को दूसरों से साझा व उससे रूबरू करवाना चाहता है तब वह अपनी लेखनी का प्रयोग कर साहित्य के क्षेत्र में अपनी रचनात्मक कृति के द्वारा भागीदारी देता है। कृतिकार की कृति प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करती है और वह पथप्रदर्शक की भाँति आगे खड़ा हो समाज के नवनिर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। कृति में अतीत के रहस्यों, वर्तमान के लिए दिशा निर्देश तथा भविष्य के लिए मार्गदर्शन का संभार भी होता है। सही अर्थों में समाज और साहित्य का मजबूत संबंध रहा करता है। और इस संबंध को बनाये रखने की कड़ी के रूप में एक सुसंपन्न रचनाकार रहता है जो इसे बनाए रखता है। गोसाईं तुलसीदास को सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है तथा उनकी कृति एक आदर्श ग्रंथ के रूप में प्रसिद्ध है। इसके बावजूद भी कुछ विद्वानों द्वारा उन पर यह आक्षेप लगाए जाते रहे हैं कि उन्होंने देश के ऐहिक उत्थान में योग नहीं दिया है। इन आक्षेपों का बड़े ही तर्क सम्मत निष्कर्षों के आधार पर आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा निषेध किया गया है। आचार्य मिश्र के अध्ययन का प्रधान क्षेत्र मध्यकाल रहा है। वे तुलसी साहित्य के मर्मज्ञ समीक्षक रहे हैं। उनके द्वारा तुलसीदास के ऐहिक विषयक विशिष्ट विशेषताओं को साहित्य के जिज्ञासुओं के समक्ष रखते हुए तुलसीदास को एक नए सिरे से देखने व समझने का दृष्टिकोण तथा अवसर प्रदान किया गया है।

मूल शब्दः आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, गोसाईं तुलसीदास, ऐहिक उत्थान, रामलीला, अखाड़ा, हनुमान पूजा

प्रस्तावना

मानस श्रव्य काव्य के साथ दृश्य काव्य भी रहा है। मानस को श्रव्य काव्य ही न रखने का कारण यह था कि श्रव्य काव्य की अपेक्षा दृश्य काव्य में सामाजिकता अधिक है। इसका लाभ यह हुआ कि जहाँ एक ओर इससे सामाजिक उत्थान में योग हुआ वहीं दूसरी ओर उस समय के साहित्य में नाटकीयता के अभाव की भी पूर्ति हो गई। दृश्य काव्य होने से समाज को लाभ इस तरह हुआ कि अब रामलीलाओं का आयोजन होने लगा जो एक तरह से लोगों को आपस में जोड़ने व उन्हें एकत्रित करने का जरिया बना। लोगों में आपसी मेलजोल की प्रवृत्ति भी बढ़ती गई। रामलीलाओं के द्वारा लोगों में विदेशी शासन के विरुद्ध एकजुट होने, बुराई के दमन, सच्चाई की विजय व आत्मविश्वास आदि की भावना जागृत होने लगी तथा इन विशिष्टताओं के द्वारा लोगों का मानस परिष्कार भी होने लगा। आपसी सौहार्द की भावना का प्रसार श्रीरामचरित के द्वारा होने लगा और ये वही राम हैं जो तुलसीदास के मानव कल्याण का आधार रहे हैं। रामलीलाओं के द्वारा उनका यह कार्य सफल होने लगा।

गोसाईं तुलसीदास पर यह कहकर आक्षेप लगाया जाता है कि तुलसीदास ने देश के राजनीतिक उत्थान में कोई योग नहीं दिया है। उन लोगों को इन रामलीलाओं का स्मरण फिर से अवश्य करना चाहिए। उस समय की राजनीतिक शासन की कठोरता के कारण किस तरह वे खुलकर शासनतंत्र का विरोध नहीं कर सकते थे। लेकिन अपनी सुझबुझ के द्वारा उन्होंने रामलीला को इसका आधार बनाया तथा परोक्ष रूप से जागरूकता का प्रसार करने लगे। आचार्य मिश्र की प्रस्तुत पंक्तियों में यह प्रतिभासित होता है, धार्मिक ओट में किस प्रकार सामाजिक अथच राजनीतिक आंदोलन चल रहा था इसका रहस्य तुलसीदास के प्रयत्नों में सन्निहित है।[1] गोसाईं तुलसीदास ने रामलीलाओं के आयोजन के माध्यम से देश के उत्थान में महत्त्वपूर्ण योग दिया। काशी में पहले संस्कृत की वाल्मीकि रामायण के आधार पर रामलीला होती थी। लेकिन बाद में मेघा भगत जो रामलीला करवाने के लिए प्रसिद्ध थे, तुलसीदासजी की मित्रता से प्रभावित होकर मानस के आधार पर रामलीला करवाने लगे। मेघा भगत के द्वारा भरत मिलाप की योजना रामलीला में की गई। आचार्य रामचंद्र शुक्ल भरत मिलाप की इस अपूर्व महिमा की प्रशंसा करते हुए कहते हैं, चित्रकूट में राम और भरत का जो मिलन हुआ है, वह शील और शील का, स्नेह और स्नेह का, नीति और नीति का मिलन है। इस मिलन से संघटित उत्कर्ष की दिव्य प्रभा देखने योग्य है। यह झाँकी अपूर्व है।[2] तुलसीदासजी की रामलीला की मुख्य विशेषता यह है कि यह केवल एक ही स्थान पर बने मंच पर नहीं होता है बल्कि इसका एक भाग एक स्थान पर तथा दूसरा भाग किसी दूसरे उपयुक्त स्थान पर होता है। लोग घूम–घूम कर रामलीला का आनंद उठाते हैं। रामनगर की यह रामलीला विश्वप्रसिद्ध है, इतनी की यह रामलीला देखने के लिए अयोध्या के महात्मा प्रत्येक वर्ष रामनगर आते हैं। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र इन रामलीलाओं के महत्त्व को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि, तुलसीदास रामभक्ति का जैसा सांस्कृतिक समारोह खड़ा करना चाहते थे वह सचमुच खड़ा हो गया। मुगलों के राज्यकाल में सामाजिक नाटक उनके कट्टर धार्मिक नियमों के कारण नहीं हो सकते थे। धर्म की ओट में इन्होंने ऐसे महानाटक का संभार कर दिया जिससे अनेक दृष्टियों से मनोरंजन के साथ ही जनता का कल्याण होने लगा।[3] रामलीलाओं के द्वारा लोगों के मन में विश्वास व उम्मीद का संचार होना स्वाभाविक ही था।

गोसाईं तुलसीदास ने केवल रामलीलाओं के द्वारा समाज में सांस्कृतिक संघटन ही नहीं किया अपितु इसके साथ ही मानस की कथा का श्रुतिसाध्य रूप भी प्रचारित व प्रसारित करवाया। आचार्य मिश्र की अधोलिखित पंक्तियों में इसका परिचय मिलता है, मानस की कथा का व्यासों द्वारा इतना अधिक प्रचार–प्रसार हुआ कि संस्कृत के अधिकतर धार्मिक और साहित्यिक ग्रंथों की व्यासविगलित अमृतवाणी के प्रवाह को उसने अपनी ओर मोड़ लिया। इस सांस्कृतिक समारोह ने भारतीय

जीवन में राम को उतारने में बहुत सहायता पहुँचाई है।[4] उस समय श्रीमद्भागवत की कथा, वाल्मीकीय रामायण की कथा आदि का ही श्रवण–मनन किया जाता था जो संस्कार–परिष्कार का कार्य करती थीं। उस समय मानसिक व सांस्कृतिक परिष्कार के लिए संस्थाएँ हुआ करती थीं। इन संस्थाओं को माध्यम बनाने की सूझ तुलसीदासजी को महसूस हुई। पहले वाल्मीकीय रामायण की कथा कुशीलव के द्वारा सुनाया जाता था। जिसे आज के समय में नट कहा जाता है। इन सबके बीच बाद में मानस की कथा का भी व्यासों द्वारा प्रचार–प्रसार होने लगा जो कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, तुलसीदास के अवदान को यूं रेखांकित करते हुए कहते हैं कि, तुलसीदास ने इतना ही किया होता तो क्या कम था। जीवन इतने से ही संघटित, प्रबुद्ध और परिमार्जित हो गया होता। पर उन्होंने इसके आगे भी कुछ किया। उन्होंने हनुमान की पूजा और उनकी मूर्तिस्थापना तथा उसके साथ अखाड़ों के खोलने का ऐसा प्रचलन किया कि समाज सबल भी हुआ। देश के उद्धार का उन्होंने ऐसा विलक्षण और महत्त्वशाली कार्य किया जिसका जोड़ इतिहास में नहीं है।[5] अक्सर यह कहा जाता है कि देश की पराधीनता का कारण लोगों का संसार से विमुख होना रहा है। तुलसीदासजी के द्वारा इस विमुखता को दूर करने के लिए ही योगियों तथा संतों के उपदेशों का प्रत्यक्ष रूप से विरोध किया गया। गोसाईं जी ने रामभक्ति को संपूर्ण लोगों तक पहुँचाने का निश्चय किया और इसके लिए सबसे पहले हनुमान भक्ति को माध्यम के रूप में चुना गया। इन्होंने हनुमान पूजा को नए रूप में लोगों के समक्ष रखते हुए अनेक स्थानों पर हनुमान मंदिर बनवाए। हनुमान मंदिर के साथ–साथ अखाड़ों का निर्माण भी किया गया तथा मंदिर के समक्ष धनुषधारी राम का विग्रह प्रतीक रूप में स्थापित किया गया। अखाड़ों में लोग अपने शरीर को चुस्त–दुरुस्त, स्वस्थ तथा बलशाली बनाने का यत्न करते थे। मन की शक्ति के साथ–साथ तन की शक्ति के महत्त्व को तुलसीदासजी के द्वारा समाज के धरातल पर चरितार्थ किया गया। इन सबके पीछे उनका विचार था कि जो लोग हनुमान से परिचित होंगे वे राम को भी जरूर जान जाएँगे तथा इनके आचरणों से वे अवश्य प्रेरित होंगे। हनुमान मंदिर के निर्माण के द्वारा उन्होंने हनुमान की शक्ति के साथ–साथ राम से भी सबको परिचित करवाया। हनुमान मंदिर में बने अखाड़ों में लोग केवल शारीरिक कसरत के लिए ही नहीं आते थे बल्कि वहाँ पर ज्ञानी–महात्माओं तथा विद्वानों का आना भी होता था। जिसके कारण लोगों के बीच विचारों का आदान–प्रदान होने लगा। तुलसीदासजी से ही प्रभावित होकर प्रसिद्ध समर्थ गुरु रामदास ने दक्षिण के प्रत्येक गाँव में मारुति (हनुमान) मंदिर बनाने के साथ–साथ अखाड़ों के निर्माण का भी कार्य किया। जिसके कारण वे मराठा शक्ति को संगठित करने में समर्थ हुए। आचार्य मिश्र इसके महत्त्व को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि, रामदास तुलसी ही मानो समर्थ गुरु रामदास हो गए और उन्हें माना छत्रपति शिवाजी ने जिनके संघटन ने दिल्ली का गला दबोच लिया था और सन सत्तावन के विद्रोह में जिस संघटन का ही बीजमंत्र काम कर रहा था, जिसे आज का राजनीतिक अपने स्वातंत्र्य–आंदोलन का मूल मानता है।[6] जिन्हें शिवाजी के इस योगदान को स्वातंत्र्य–आंदोलन के मूल के रूप मानने में कोई आपत्ति नहीं, उन्हें गोसाईं जी के इस महत्त्व को स्वीकार करने में भी संशय व झिझक नहीं होनी चाहिए। जो व्यक्ति अपने समय समाज की परिस्थितियों को देख खेती न किसान को, भिखारी को न भीख... कहता हो, जो काव्य उद्देश्य में मंगलानां को महत्त्व दे तथा जो सुरसरि सम सबकर हित होइ... कहता दिखे उसे पलायनवादी या ऐहिकता से विमुख कहना किसी भी प्रकार से उचित नहीं ठहरता है।

निष्कर्ष

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने लक्षित किया है कि गोसाईं जी के द्वारा राम का एक ऐसा भव्य तथा शालीन रूप सबके समक्ष रखा गया जो हर व्यक्ति–समूह को प्रेरित करती है और आगे भी करती रहेगी। तुलसीदास जी के रूप में ऐसे महान् विद्वान का अविर्भाव इस हिंदी–साहित्य में हुआ जिससे संपूर्ण संसार कृतज्ञ होता रहेगा यह निश्चय ही कहा जा सकता है। इनके द्वारा रामलीलाओं, श्रुतिसाध्य चिंतन–मनन तथा हनुमान पूजा के माध्यम से राम को लोक में प्रतिष्ठित करने व लोककल्याण के लिए जो विलक्षण कार्य किया गया वह अद्भुत है।

संदर्भ सूची

1. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिंदी साहित्य का अतीत भाग–1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण प्रथम 2006, आवृत्ति 2014, पृष्ठ संख्या 251.
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, त्रिवेणी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण प्रथम 2016, आवृत्ति 2018, पृष्ठ संख्या 72.
3. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिंदी साहित्य का अतीत भाग–1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण प्रथम 2006, आवृत्ति 2014, पृष्ठ संख्या 252.
4. तदेव, पृष्ठ संख्या 253.
5. तदेव, पृष्ठ संख्या 154.
6. तदेव।